जाति का यथार्थ

डॉ. मोहिनी मिंकी
मो. 9917120624

जब मैं पहली बार 'दयाल बाग शिक्षण संस्थान' में नियति से मिली तो लगा कि बड़ी कड़क-खरे स्वभाव की लड़की है, इसलिए मैं उसकी पूरी इज्जत किया करती क्योंकि मैं धीरे- धीरे जान ही चुकी थी कि वह नारियल के ऊपरी खोल की तरह सख्त जरूर है परन्तु भीतर से सफेद गिरी की तरह उसका दिल है, उसके चरित्र की विशेषता यह थी कि वह हमेशा सच ही बोलती... चाहे कितना भी 'कटु' क्यों न हो...

शोध कार्य में मेरा मन रमने ही लगा था कि मेरी मुलाकात शिक्षण संस्थान में रमन से हुई, काफी नेक स्वभाव का लगा मुझे और मेरी रमन से अच्छी मित्रता हो गई, जो कि अंततः बढ़ती ही गई। मित्रता जब बढ़ती है तो दोस्तों के प्रेम प्रसंग तो खुलते ही हैं, मित्रता का पैमाना भी यही है, तो मेरे मित्र भी मित्रता की कसौटी पर खरे उतरे, उन्होंने पूरी निष्ठा और समर्पण भाव से बताया कि मैं एक लड़की से बहुत प्रेम करता हूँ, जो दलित जाति की है, तुम तो जानती हो आरती, मैं ब्राह्मण कुल में जन्मा हूँ...और ब्राह्मण कुल में, दलित जाति की लड़की कभी स्वीकृत नहीं होगी। मेरे गाँव तो क्या आसपास के दस गाँव में जाति के बाहर जाकर किसी ने विवाह नहीं किया, मैं ऐसा दुस्साहस कर बैठा हूँ! मेरे घरवाले उस लड़की को कभी स्वीकार नहीं करेंगे...। समुचित भाव से मैंने बस इतना भर कहा, 'जब तुम जानते थे, जाति की बेड़ियों को नहीं काट पाओगे, तो तुमने उससे प्रेम क्यों किया?'

रमन बोला, 'मैं अपने एक हजार प्रयास करूंगा, पर अपने पिता के फैसले के खिलाफ, मैं भी नहीं जा सकता।'

मैंने मित्र से बड़े ही प्रेमभाव से कहा कि वह भी तुमसे अत्यधिक प्रेम करती होगी... लड़कियां यदि सच्चा प्रेम करती हैं तो प्रेमी को भगवान बना लेती हैं। एकनिष्ठ प्रेमिका के लिए जीवन की सबसे बड़ी उपलब्धि होती है कि 'प्रेमी को पति के रूप में पाना' प्रेमी का पति स्वरूप मिलना, उसके लिए भगवान मिल जाने जैसा होता है और इतना कहकर मैं शोध कक्ष से बाहर निकल गई।

*****

शोध कार्य पूरा करने के साथ ही,

मित्र सरकारी अध्यापक हो गए थे और मैं फूली नहीं समा रही थी क्योंकि मेरा भी शोध कार्य प्रगति कर रहा था, पाँचवे अध्याय को लिखकर उपसंहार लिखने की रूपरेखा बना ही रही थी कि फोन की घंटी बजी, 'रमन का फोन' और अति उत्साह से मैंने फोन रिसीव किया, मित्र ने बताया कि मेरा विवाह राजघराने की कुलीन कन्या शुचि के साथ, पिता की पसन्द से तय हो गया है, तुम्हें जरूर आना है...।

मैं बौखलाई-प्रेम किसी और से; विवाह किसी और से, तुम पागल हो गए हो रमन, अपनी प्रेमिका को किसी और के लिए छोड़ दोगे, ये कैसा प्रेम है तुम्हारा?

और मैंने फोन काट दिया।

*****

ब्राह्मण समाज में लग्न का अपना अलग ही महत्व है, रमन के हाथ पर लग्न रखने का समय हो गया था... और शाम के वक्त अक्सर में शोध लेखन में वयस्त रहती थी, फोन की घंटी बजी मित्र का फोन और मैंने तुरंत रिसीव किया-'मोहिनी मेरी इस विवाह में कोई रुचि नहीं है, मैं इस विवाह के लिए भावनात्मक तौर पर तैयार नहीं हो पा रहा हूँ... कुछ समझ नहीं आ रहा जिंदगी किस मोड़ पर जा रही है... समाज के हाथ की कठपुतली बन गया हूँ।"

मैंने रमन से बड़े ही सहज होकर कहा, 'तोड़ दो ये विवाह, उठ जाओ मण्डप से, तुम पढ़े-लिखे हो, सरकारी नौकरी है तुम्हारी, कोई तुम्हारा कुछ नहीं बिगाड़ पाएगा, तुम जिस लड़की से प्रेम करते हो, उसी से विवाह करो, कौन है वो लड़की? मुझे नंबर दो उसका मैं बात करती हूँ।' रमन ने लड़की का मुझे न नाम बताया और न ही नंबर दिया।

*****

मेरे कहने पर विवाह तोड़ने की जुर्रत तो की पर बुजदिली से क्योंकि वे शादी तो तोड़ नहीं पाए।

उस लड़की से मित्र ने बात जरूर की।

मित्र ने प्रेमिका से कहा, 'मैं ये शादी तोड़ने को तैयार हूँ, हम सही समय आने पर विवाह कर लेंगे क्योंकि मैं नहीं जानता कि शादी के मंडप से उठूँगा तो न जाने क्या परिस्थितयां बनेंगी... मैं तुमसे तब तक विवाह नहीं कर पाऊँगा, जब तक मेरे छोटे भाई का विवाह नहीं हो जाता, तुम मुझसे विवाह के लिए नहीं कहोगी।'

प्रेमिका ने कहा, 'तुम्हें मुझसे छह महीने के भीतर शादी करनी होगी, अपने माता-पिता या मुझमें से कोई एक चुन लो क्योंकि तुम मुझसे विवाह करोगे तो तुम्हारे माता-पिता आजीवन तुमसे संबंध तोड़ लेंगे और तुम्हारा शुचि से विवाह हुआ तो ये हमारी आखिरी बात होगी, सदा के लिए भूल जाना...।

मित्र ने मुझे यह वस्तुस्थिति बताई तो लगा कि अब इनका विवाह संभव नहीं!

*****

विवाह वेदी पर तो मैं नहीं जा सकी परन्तु कुछ समय पश्चात मित्र की पत्नी से मिली तो लगा कि कितनी सुशील, सुन्दर, संस्कारी कन्या है। शुचि मुझे अत्यधिक अच्छी लगी।

मित्र से मिलना दो-तीन बार ही हो पाया परंतु फोन पर बातचीत हो ही जाती थी, मित्र जब-तब अपनी प्रेमिका का जिक्र किया करते, जिसमें प्रेमिका के लिए सिर्फ प्रेम हुआ करता था। सोचती ये कैसा प्रेम है...?

*****

वक्त ने रफ्तार पकड़ ली, मित्र अपनी गृहस्थी में रमते चले गए, पदोन्नति भी काफी कर ली थी...। मैंने भी पूर्ण लगन व समर्पण भाव से शोध कार्य पूरा कर लिया और लेखन कार्य में मशगूल होने लगी थी।

अंततः वह दिन आ ही गया जब पता चला कि मित्र की प्रेमिका नियति है, नियति ने ही तो उस रात बताया था कि तुम जैसा सोचती हो मोहिनी, रमन वैसा नहीं है...। उस रात काफी गहरी बातें चलीं हमारी, जब नियति ने दिल खोला तो रक्त की नदियां बही और मेरी रूह ऐसे कंपी जैसे धरती हिली हो।

'आरती तुम नहीं जानतीं कि मैं आज भी रमन से कितना प्यार करती हूँ, रमन मेरे घर आया करता था, उसने पारिवारिक उपस्थति के मध्य खुद को सहज बना लिया था, हमारा प्रेम परवान चढ़ने लगा था, साहित्य से लेकर समाज की बातें हम किया करते थे, विवाह करना चाहती थी, उसकी माँ के आगे नौ-नौ आँसू रोई, पर जाति से कमतर होने के कारण मुझे उसके माता-पिता ने कभी स्वीकार नहीं किया। मैंने रमन से कहा, 'हम विवाह कर लेते हैं, तुम्हारी सरकारी नौकरी है, मैं भी शिक्षण संस्थान' की प्रवक्ता हूँ, गृहस्थी को संभाल लेंगे, साहित्य के क्षेत्र में भी हम बेहतर कर सकेंगे, अब तुम्हारे बिन रहा नहीं जाता, शादी कर लो मुझसे। उसने मुझसे कहा, 'मान लो यदि मैं अपने घरवालों के खिलाफ जाकर तुमसे विवाह कर भी लूँ और यदि मुझे उनकी कभी याद आई या

कभी उनकी कमी महसूस हुई तो जिस चेहरे से आज मुझे मोहब्बत है, कहीं ऐसा नहीं हो कि उसी को जिंदगी भर कोसूँ।' वह एक पल को कहती हुई रुकी, जैसे उसने ठंडी साँस बाहर की ओर छोड़ी हो, फिर बोली, 'जाति से दलित होना इतनी बड़ी खाई बन जाएगा, कभी सोच न था...। इसी बीच मेरी माँ गुजर गई, पिता तो पहले ही गुजर चुके थे, मेरा प्रेम भी जाति के तले कुचला गया, रौंदा गया...! किस गलती कि सजा मिली...मुझे? जाति से ब्राह्मण पैदा नहीं हुई या दलित पैदा हुई,या, अपने ही प्रेमी द्वारा ठगी गई...?आखिर क्या गलती थी मेरी...?मेरी छोटी बहन चाहती थी कि मैं जल्द से जल्द विवाह कर लूँ... ताकि वह अपने प्रेमी से विवाह कर सके, लेकिन मेरा अपना प्रेमी किसी और से विवाह कर चुका था, अपनी ही बहन के विवाह की सबसे बड़ी विघ्न बन रही थी, अपनी ही बहन की नजर में, दुश्मन बनी हुई थी मैं...। बड़ी बहन के रहते भारतीय समाज में छोटी बहन का विवाह कैसे संभव है...? मैंने अगुआई की और अपनी छोटी बहन का विवाह, उसके प्रेमी से करा दिया...जानती थी कि प्रेमी से विवाह प्रेमिका की सबसे बड़ी उपलब्धि होती है...।

बड़े भईया के गले लग रक्त के आँसू रोई थी उस रात...। भईया मैं, जाति के तले रौंदी गई...! हाँ-हाँ भइया, यही है जाति का यथार्थ❑

पृष्ठ सं. 83 का शेष भाग

पड़ गया। वह शंकर के इस व्यवहार को एकदम से समझ ही नहीं पाई और तुरंत पूछ बैठी-'तुम्हारा आशय क्या है? आखिर तुम कहना क्या चाहते हो?'

'मेरे कहने के लिए आखिर तुमने कुछ छोड़ा ही कहाँ है। तुम्हारा यह आज का रिजल्ट तुम्हारी करतूतों का ही परिणाम है। मैं तो उसी दिन समझ गया था कि दाल में कुछ काला है, जब तुम्हारे उस सो कॉल्ड गुरु का फोन आया था। फोन रखने के बाद मेरे पूछने पर तुमने सिर्फ और सिर्फ इतना ही बताया कि देशबंधु कॉलेज में स्थायी नियुक्ति की रिक्तियाँ हैं लेकिन यह नहीं बताया कि यह नियुक्ति तुम्हें किस कीमत पर मिलने वाली है। बार-बार तुम्हारे गुरु का तुम्हें फोन करना मुझे कभी न भाया किंतु मैंने तुम्हें कुछ नहीं कहा। लेकिन कब तक ना कहता, आज बोलना ही पड़ा।'

शंकर धाराप्रवाह इतना कुछ बोल गया जिसकी कल्पना तक कर पाना अपर्णा के लिए मुश्किल था। यह सब सुनकर वह स्तब्ध रह गई। उसके कान उस समय जो कुछ सुन पा रहे थे, वह किसी दुर्घटना से कम नहीं था।

दुर्घटनाएं केवल सड़कों पर ही नहीं होती। केवल शरीर को ही नुकसान नहीं पहुँचाती बल्कि घर की चारदीवारी में होने वाली ऐसी घटनाएं शरीर को भेदकर अन्तर्मन तक को छलनी कर देती हैं।

अपर्णा के मुँह से निकलने वाले शब्दों में पीड़ा अवश्य थी किंतु उनमें क्रोध लेशमात्र भी ना था। उसने शंकर से कहा-'शंकर, मुझे तुम्हारी सोच पर बिल्कुल भी क्रोध नहीं है, बल्कि पीड़ा है... अपने प्रेम से बिछड़ जाने की। क्योंकि सर्वप्रथम तुमने प्रेम को कुरूपता प्रदान की और उसके बाद उसकी निर्मम हत्या भी कर दी। मैं यह भी जानती हूँ कि इस लाश की अंत्येष्टि का भार भी मेरे ही ऊपर है। समाज में अग्नि परीक्षाओं का भार भी स्त्रियों के ही जिम्मे आता है किंतु मैं तुम्हें स्पष्ट कर देना चाहती हूँ कि ना तो मैं सीता हूँ और ना ही उसका अनुसरण करने वाली समाज की अन्य औरत।'वह एक पल को रुकी, उसने चढ़ाई अपनी साँसों को संयमित किया और बोली, 'वहीं दूसरी ओर राम तो तुम भी नहीं हो जो मुझसे मेरी पवित्रता का सबूत माँगो। और अगर राम होते भी, तो आज मैं और मेरा चरित्र, तुम्हारी सोच का मोहताज नहीं हैं आज मेरे लिए तुम केवल और केवल हत्यारे हो। हम दोनों के प्रेम और विश्वास को मार चुके हो तुम। तुम्हारा सानिध्य अब मेरे बर्दाश्त के बाहर है। तुमको यहाँ से चले जाना चाहिए।' इतना कहकर अपर्णा अपने कमरे में चली गई।

नीला काकी इस पूरे दृश्य की साक्षी थी। वह तुरंत अपर्णा के पीछे-पीछे उसके कमरे की ओर भागी। शंकर को अपनी विवेकहीनता का आभास हो चला था। ईर्ष्या उसके शरीर से आत्मन की भाँति सब कुछ अपने अंदर समेटकर वहाँ से प्रस्थान कर चुकी थी। यह वह समय था जब शंकर के सामने सारे विकल्प समाप्त हो चुके थे मात्र वापस लौट जाने के अलावा।

हाँ! उसके साथ कोई था तो केवल पश्चाताप की झुलसन...।❑

डिजिटल में पढ़ना; सहज व सुविधाजनक है